**International Journal of Advanced Research and Development**
**ISSN: 2455-4030**
**Impact Factor: RJIF 5.24**
**www.advancedjournal.com**
**Volume 2; Issue 6; November 2017; Page No. 915-916**

# साहित्य की स्त्री दृष्टि : 'इदन्नमम' उपन्यास के संदर्भ में

**पूनम**
शोधार्थी, हिंदी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा, भारत।

**प्रस्तावना**

साहित्य की स्त्री दृष्टि एक वैश्विक वैचारिक अवधारणा है जो भारत में 1975 में अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के साथ क्रमशः आकार लेती दिखाई देती है। इसके मूल में स्त्री मुक्ति आंदोलन की राजनीतिक एवं वैचरिक प्रतिबद्धता को लक्षित किया जा सकता है जो दास प्रथा की समाप्ति के आंदोलन के दौरान स्त्रियों की स्थिति में सुधार कार्यक्रम के रूप में प्रकट हुई । स्त्री विमर्श चूँकि स्त्री अस्मिता को केन्द्र में लेकर उसे 'मनुष्य' रूप में समझे जाने की आवश्यकता पर बल देता है, इसलिए यह अनिवार्य रूप में समाज की विभिन्न संस्थाओं – परिवार, विवाह, धर्म, न्याय, मीडिया और सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों को स्त्री के संदर्भ में देखता है।[1]

स्त्री को लेकर भारतीय साहित्य, दर्शन एवं धर्मशास्त्रों में चिन्तन की सुदीर्घ परम्परा रही है जहाँ स्त्री की सम्पूर्ण सत्ता को भोग्या, अबला, ललना, कामिनी, रमणी आदि विशेषणों के साथ हेय एवं पुरुष–सापेक्ष रूप में चित्रित किया गया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि प्राचीन एवं मध्ययुगीन सभी रचियता एवं टीकाकार पुरुष थे। दूसरे, मातृसत्तात्मक व्यवस्था के अपदस्थ होने के बाद से समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विधान रहा है। फलतः स्वाभाविक था कि पुरुष के संदर्भ में पुरुष दृष्टि द्वारा स्त्री को देखा जाता। इसलिए पुरुष की श्रेष्ठता, सम्मान, स्थान, शक्ति, अधिकार और स्वार्थ की रक्षा के लिए धर्मशास्त्रों ने अनेक ऐसे आप्तवचनों, सूत्रों, श्लोकों की रचना जिन्होंने स्त्रियों के जीवन को अनेक सामाजिक–नैतिक अर्गलाओं में बाँध दिया।[2]

मैत्रेयी पुष्पा के समूचे कथा साहित्य में स्त्री अपनी अस्मिता और अस्तित्व के लिए संघर्ष करती दिखाई देती है। यह संघर्ष समाज से है, रूढ़ियों से है, थोपी गई परंपराओं से है और पुरुष की अहं में लिपटी मानसिकता से है। 'इदन्नमम' में ग्रामीण समाज में उभरती स्त्री चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। इस उपन्यास के केन्द्र में है मंदाकिनी। उसके पिता महेन्द्र की हत्या गाँव में ही अस्पताल भवन के उद्घाटन समारोह के समय हो जाती है। बऊ (मंदाकिनी की दादी), प्रेम (मंदाकिनी की माँ) और मंदाकिनी – तीन पीढ़ियों की कथा है यह उपन्यास। ''इदन्नमम' नायिका प्रधान उपन्यास है, लेकिन पूर्णतया औरतों की दुनिया – आधी दुनिया – को समर्पित उपन्यास नहीं। केन्द्रीय पात्र मंदाकिनी औरत जरूर है, लेकिन सिर्फ औरताना सरोकारों से बंधी नहीं; औरताना नज़रिए से अपने को, दूसरों को निहारती नहीं। उसकी दृष्टि में व्यापकता है, अपने भीतर गहरे और अपने से बाहर दूर तक देखने का सामर्थ्य। सिर्फ देखने का नहीं, देख कर गुनन–बुनने का सामर्थ्य। वह सुन सकती है दबा–रूधां, गुम हो जाता आर्त्तनाद और हथौड़ों की मनिन्द चोट करता अपनी अन्तरात्मा का चीत्कार। वह सूंघ सकती है कितने ही झिलमिल आवरणों को नीचे दम तोड़ती झूठी, खोखली, मक्कार नीतियों–जालसाजियों को। वह महसूस कर सकती है वक्त की आहट, वक्त की आहट को बदल सकने वाली हर हरकत हो, उस नामालूम–सी हरकत के पीछे छिपी ताकत हो। वह चखना चाहती है संघर्ष के दरख्त की ऊँची, सबसे ऊँची टहनी पर लगे सफलता के दैवी फल का स्वाद। यानी मंदा सही मायनों में एक भरा–पूरा इंसान है – पाँचों इन्द्रियों समेत।[3]

अपनी बहू प्रेम की कारस्तानी ने बऊ के विश्वास को हिला दिया था। मंदा पर उसकी परछाई भी बऊ पड़ने नहीं देती। मंदा ऐसे ही वातावरण में सयानी होती है। उसे हमेशा डराया जाता है कि कोर्ट–कचहरी का पुलिस सिपाही कभी–भी उसे पकड़ कर ले जा सकता है। अपने बेटे की निशानी को बचाने के लिए बऊ बिरगवाँ से श्यामली चली जाती है। वह प्रेम से कहती है 'अब काहे बात का हक्क माँग रही है बिटिया का? भगते बखत याद नहीं आई मन्दा?[4]

कुसुमा भाभी परित्यक्ता है। पिता गरीब है। इसलिए पति यशपाल ने पिता की रजामन्दी से दूसरा विवाह कर लिया है, कुसुमा को उसकी किस्मत के सहारे उपेक्षित छोड़कर। अपमान और अन्याय ने कुसुमा को आहत किया है। दाऊजू के साथ कुसुमा का संबंध एक बहुत बड़ा कदम है। कुसुमा मंदा से कहती है – ''बिन्नू यह जल निरमल है या मैला? पवितर है या पाप का? इमरत है या बिस? नहीं जानते हम। तुम्हारी रामायन में लिखा भी होगा तो लिखने वाला यह नहीं जानता कि आदमी जब प्यासा होता है, प्यास से मर रहा होता है, तो कहाँ देखता है, कहाँ सोचता है, कहाँ करता है कोई भेद? कोई अंतर?''[5]

'बिन्नू, हमे एक बात, समझाओं, अरथाओं कि ये रिश्ते–नाते, संबंध और मरजाद किसने बनाई? किसने सिरजी है बंधनों की रीत? जो नाम लेती हो उनने? मनु–व्यास ने? रिसियों–मुनियों ने? देवताओं ने कि राच्छसों ने?''[6]

विवाह–संस्था के निरन्तर जर्जर होते स्वरूप को लेकर उसे कोई आस्था नहीं, उल्टे अनेक आशंकाएं है, अनेक असहमतियाँ। कुसुमा के मन में दाऊजू के साथ अपने संबंध को लेकर कोई अपराधबोध नहीं है। जब वह गर्भवती होती है तब भी वह डरती नहीं है। ''जैसे ही पूछा कि भाइयों का कौल खाकर बता कुसुमा, यसपाल कबहूँ नहीं आया तेरे हिरकॉप (पास)? कुसुम भाभी ने घूँघट मे से एक नज़र सास को देखा, फिर सबको निहारा और सिर हिला दिया, अर्थात् नहीं, कभी नहीं!''[7] कुसुमा के मन में लेशमात्र भी अपराधबोध नहीं है। 'पाप–पुण्य, सही–गलत की परिभाषाएँ उसे झूठ लगती है। यशपाल कुसुमा को बुरी तरह पिटता है। वह बच्चे को खत्म करने के लिए अस्पताल जाने को कहता है लेकिन कुसुमा तैयार नहीं होती। वह कहती है – ''नहीं जाऊँगी! कभी नहीं! आकास–पाताल एक हो जायँ तो भी नहीं।''[8] पुरुष की उत्छृंखलता को रेखांकित कर वह ऐलान करती है कि स्त्री निरीह गाय की तरह अनादि तक सब कुछ मूकभाव से नहीं सहती रहेगीं। बेहतर है परिवार को बचाने के लिए समय रहते परिवार का पुरुष ही कोई सार्थक भूमिका निभाए। दादा पंचम सिंह कुसुमा के इस अतिक्रमण में नारी के विद्रोह की ज्वाला को देख पाए है।[9] मैत्रेयी पुष्पा ने कुसुमा के

चरित्र को जिस ढ़ंग से निखारा है, उससे लगता है कि विवाहेत्तर प्रेम संबंधों के औचित्य को एक विशेष फ्रेम के भीतर स्वीकार कर लिया है।

मन्दा की माँ प्रेम बऊ की तरह घर की मर्यादा के नाम पर अपनी देह की भूख का दमन करने की बजाय उसके शमन की राह ली। इसलिए बऊ समाज द्वारा आदर की अधिकारिणी बनी जबकि प्रेम को लांछन, तिरस्कार और बहिष्कार मिला। प्रेमा घर–गृहस्थी, पति–पुत्री, सुख–मान से सम्पन्न है। पति की मृत्यु ने उसके सुनहरे संसार को छिन्न–भिन्न कर दिया है। वह शोकातुर है, लेकिन वक्त के साथ–साथ छीजता शोक उसे कामातुर बनाता चला है और अपने पर नियंत्रण न रख पाने के कारण पारिवारिक मर्यादाओं, सामाजिक वर्जनाओं को उल्लंघन कर वह प्रेम रतन यादव के साथ भाग जाती है। प्रेमा और रतन का संबंध वासना से बंधा है। इसलिए काम ज्वर उतरते ही एक–दूसरे के प्रति हृदयहीन हो जाना स्वाभाविक था। रतन यादव की धमकी और पिटाई से डर कर मंदा के नाम की गई जमीन हथियाने के लिए बेशक उसने मंदा की कस्टड़ी के लिए अदालत में मुकदमा दायर किया है, लेकिन और अधिक कठपुतली बने रहना उसे स्वीकार नहीं। वह चुपचाप केस वापिस लेकर मंदा को मानसिक यातना से मुक्त कर देती है।

'इदन्नम' उपन्यास में मैत्रेयी पुष्पा सांकेति रूप से स्त्री मुक्ति व स्त्री विमर्श का सवाल नये सिरे से रेखांकित करती है। विभिन्न गाँवों में घूमती हुई कथा के मध्य परम्परागत परिवार हैं जिनमें पुरानी मान्यताये हैं, रूढ़ियाँ हैं, अंधविश्वास हैं, संस्कार है, इसके साथ ही कुछ मूल्य भी हैं लेकिन मैत्रेयी पुष्पा के स्त्री पात्र इस खोखली परम्परा, मानसिकता और अंधविश्वास के माहौल के विरूद्ध अपना सिर उठाकर अपनी चेतना का सबूत देती हैं। ''लेखिका संकेतों में नहीं, खुले तौर पर पाठक तक यह सम्प्रेषित कर देना चाहती है कि पुरुष प्रधान व्यवस्था की प्रतिनिधि बन कर औरत जब तक छोटे–मोटे सुखों की खातिर दो खेमों में बंटी रहेगी, तब वह वह कमजोर से कमजोरतर होती जाएगी। उधार की ताकत के बल पर अपने को ताकतवर समझना एक तरह का नारसिसोन्माद है जिसका अंत कभी सुखद नहीं होता।''[10]

बऊ, प्रेम और मन्दा इन तीन स्त्री चरित्रों के माध्यम से लेखिका ने तीन पीढ़ियों की कथा कही है। तीनों की अपनी–अपनी जिन्दगी है, अपने–अपने आदर्श। तीनों समानांतर भी हैं और एक–दूसरे को काटती भी हैं। लेखिका की नारी पात्र संवेदनशील है वे भिन्न परिस्थितियों में जीते हुए भी दूर बैठी किसी दुखियारी नारी की मर्मान्तक पीड़ा को समझ सकती है। सिर्फ समझ नहीं सकती, उसे बयान कर विपरीत ध्रूव पर खड़े पुरुषों को भीतर तक हिला देती है।

वास्तव में यह उपन्यास स्त्री पात्रों की गतिविधि, उनकी निर्णायक भूमिका, दृढ़ मनोबल, संघर्ष की पराकाष्ठा और उनके जूझारू व्यक्तित्व के उद्घाटन में प्रतिफलित होती है। इनकी प्रमुख प्रवक्ता एक ऐसी स्त्री है जो अपने युगबोध को वाणी देती है। न तो वह किसी पुरुष द्वारा निर्देशित रास्ते पर चल रही है और न ही किसी पुरुष के सहारे पर। स्त्री लेखन की दिशा में मंदा एक उपलब्धि है। डॉ॰ रोहिणी अग्रवाल के अनुसार 'माना कि अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता, माना कि प्रचण्ड तूफान का सामना एक दीया नहीं कर सकता, लेकिन एक ईमानदार साहसिक कोशिश तो कर सकता है, अपने स्तर पर। तेल की एक बूंद की तरह जो पानी में दूर तक तिर कर अपनी उपस्थिति जता ही देती है। 'इदन्नमम' में मंदा के जरिए लेखिका ने अपने इसी विश्वास को आधार देने का प्रयास किया है।'

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने साहित्य के माध्यम से परम्परागत छवि से भिन्न साहसी, निडर, विद्रोही, आत्मनिर्भर, चेतनाशील नई स्त्री की रचना की है। नई स्त्री अल्पशिक्षित होते हुए भी व्यवहारिक, विवेकवान व कुशल है। वह जीवन जीने के ढंग से परिचित है तथा कुट्टनी चरित्र को अपने जीवन में सकारात्मक ढंग से लेती हुई अपनी जीवन–यात्रा को सरल व आनन्दायक बनाती है। वह कहीं भी अपराध–बोध से ग्रस्त नहीं है। उसकी नायिकाएँ आँसू भरी नियति को स्वीकार नहीं करती, न ही वे रोती–पिटती–कलपती ही दिखाई देती हैं। वे जीवन संघर्षों के साथ चार–चार हाथ करती हुई अपनी आजादी का सदुपयोग करती हैं। स्त्री के लिए उसकी देह सबसे बड़ी कारागाह है तो मुक्ति का साधन भी। अतः देह प्रेम को मिलजुल मिश्रण करती स्त्री इन दैहिक संबंधों से आक्रांत नहीं है, क्योंकि पुरुषों का तो खेल ही रहा है शरीर के साथ खेलना। मंदा एक साहसी, अनूठी, हौंसलेमंद, जुझारू, कर्त्तव्यनिष्ठ स्त्री है जो प्रेम को सकारात्मक अर्थ देती हुई उसे अग्नि की तरह उर्ध्वमुखी बनाती है। 'मंदा' के भीतर संघर्षमयी 'कस्तुरी' की छाया है जो शोषण–उत्पीड़न के खिलाफ मोर्चा बनाकर युद्ध करती है। मकरंद का प्रेम मंदा के जीवन के रास्ते का कांटा नहीं अपितु सहयोगी बनता है। मंदा एक ऐसी स्त्री की छवि का आदर्श प्रस्तुत करती है जिसका आत्मनिर्भर, संघर्षमयी जीवन कर्त्तव्य–पथ की डोरी से बंधा हुआ है। प्रेम और मुक्त यौनाचरण की पहल स्त्री द्वारा कुछ–कुछ प्रतिशोध की पहलकदमी के भाव से होती है और इस प्रक्रिया में वे मर्दों के बनाए सभी कठघरों – घर, समाज और परिवार को तोड़ना चाहती है लेकिन किसी विकल्प की रचना नहीं करती। जो मुक्ति की आकांक्षा करेगा, निश्चित ही वह बन्दी रहा होगा। फिर कसावट जितनी गहरी होगी, छटपटाहट उतनी ही तीव्र होगी। 'घर, समाज और परिवार' ये तीनों नाम स्त्री ही हरबन्दियों के हैं और मर्दों की सुविधा के लिए निर्मित किए गए हैं क्योंकि इसी समाज में मर्दों के मुक्त यौनाचरण के लिए वेश्याओं की बस्तियाँ बसाई गई हैं। प्राचीन काल से यह महान परम्परा आज तक चली आ रही है और आजादी के सत्तर साल बाद इक्कीसवीं सदी में मर्दवाद के इस आनन्द क्षेत्र को कानूनी लायसन्स दिए जाने का विचार बन रहा है। यहाँ घर, परिवार और समाज की परिभाषाएँ और व्याख्याएँ क्या कहती है? यही कि स्त्री इस समाज में पुरुष के लिए है, पुरुष स्त्री के लिए नहीं।

## संदर्भ सूची


1. रोहिणी अग्रवाल, लेख, साहित्य की स्त्री दृष्टि
2. रोहिणी अग्रवाल, साहित्य की जमीन और स्त्री मन के उच्छ्वास, पृ॰ 11–12
3. रोहिणी अग्रवाल, इतिव्रत की संचेतना और स्वरूप, पृ॰ 154
4. मैत्रेयी पुष्पा, इदन्नमम, पृ॰ 21
5. वही, पृ॰ 92
6. वही, पृ॰ 95
7. वही, पृ॰ 139
8. वही, पृ॰ 141
9. वही, पृ॰ 164
10. रोहिणी अग्रवाल, इतिवृत की संरचना और स्वरूप, पृ॰ 167